IJAER/ July-August -2022/Volume-11/Issue-4 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

नागार्जुन के उपन्यासों में ग्रामीण संस्कृति का अवलोकन

पराशर त्रिपाठी (शोधार्थी) , सनराइज यूनिवर्सिटी अलवर (राजस्थान)

डॉ0 कविता सिंह (एसोसिएट प्रोफेसर) , सनराइज यूनिवर्सिटी अलवर (राजस्थान)

सारांश

भारतवर्ष गाँवों का देश है और आज भी भारत की अस्सी प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में ही निवास करती है। यदि कोई भारत की मूल संस्कृति और आत्मा का दर्शन करना चाहता है तो वह उसे भारतीय गाँवों में ही प्राप्त कर सकता है। आज ले ही जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा रोजगार की तलाश में शहरों की ओर रुख कर गया है, लेकिन इतना तो निश्चित है कि जब तक इस देश के गाँवों का विकास नहीं होगा, तब तक देश का विकास नहीं हो सकता। नागार्जुन चूँकि समाज के अंतिम व्यक्ति को भी उसका वाजिब हक दिलाना चाहते थे, अतः उनकी व्याप्त दृष्टि ग्रामीण परिवेश को ही आधार बनाकर आगे बढ़ी है। नागार्जुन की दृष्टि ग्रामीण समाज के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक यथार्थ के उद्घाटन के साथ–साथ ग्रामीण संस्कृति के प्रति भी सचेष्ट रही है। नागार्जुन मिथिला की संस्कृति परंपरा से इस रूप में जुड़े हैं कि ग्रामीण–जीवन के सारे उपादान– खेत–खलिहान, बाग–बगीचा, आबादी, उनकी रचनाओं में सजीव बन पड़े हैं। मिथिलांचल की मिट्टी से परिचित होने के कारण वहाँ की संस्कृति पूरे उभार के साथ उनकी रचनाओं में आयी है। पक्की सुनहरी फसलों की मुस्कान,धान कूटती किशोरियों की कोकिल कंठी तान, 'मौलसिरी के ताजे–टटके फूल','पगडंडी की चंदनवर्णी धूल', तालमखाना और गन्ने के रस का स्वाद पाकर वह तृप्त हो उठते है। पानी में धान रोपने से छुप–छुप, सुप–सुप की आवाज उन्हें सुरैया की आवाज से अधिक सुरीली लगती है। अलाव के चारों ओर बैठकर 'बतियाना' ग्रामजीवन के माहौल को मूर्त करता है।

प्रस्तावना

नागार्जुन समकालीन हिन्दी कविता में महत्वपूर्ण कवि के रूप में परिचित है लेकिन कविता के अतिरिक्त नागार्जुन ने गद्य रचनाएँ भी की हैं। जो उनके जन प्रतिबद्धता का प्रमाण प्रस्तुत करती हैं कहा भी गया है कवि की कसौटी उसका गद्य होता है, इस कसौटी पर भी उनका गद्य स्तरीय और गंभीर है उन्होंने हिन्दी और मैथिली को मिलाकर कुल बारह उपन्यास लिखे जब हमारी दृष्टि इनकी गद्य विधा खासकर उपन्यसों की ओर जाती है तो कुल मिला कर हम पाते हैं कि कविता की भाँति ही इनके उपन्यासों में भी ग्रामीण संस्कृति वे पूरी उभर कर आयी है। यद्यपि नागार्जुन मुख्यतः जन–समस्याओं को उभारनेवाले रचनाकार हैं तथापि उनका ध्यान ग्रामीण–संस्कृति के विविध पक्षों की ओर भी गया है और यत्र–तत्र इनका प्रयोग उनके विभिन्न उपन्यासों में हुआ है।

साहित्यावलोकन

नागार्जुन के उपन्यासों में ग्राम चेतना व नागार्जुन के उपन्यासों में ग्राम जैसे कई शोध कार्यों के जरिये नागार्जुन के उपन्यासों में ग्रामीण संस्कृति के विविध आयाम को समीक्षकों ने अपने शोध आलेख में समझने

का प्रयास किया गया है। जहाँ मिथिलांचल के ग्रामीण परिवेश में आ रहे बदलाव को साफ देख पाते हैं । नागार्जुन का विशेष लगाव अपनी माटी, अंचल तथा वहाँ के लोगों से रहा है । फलतः उनके उपन्यासों में ग्रामीण संस्कृति का चित्रण यथावत उसी रूप में उभरकर आया है। (2012) में डॉ. सुरेंद्र कुमार यादव ने "नागार्जुन का उपन्यास साहित्य समसामयिक संदर्भ" में लिखा है "उनका उद्देश्य मुख्य रूप से मिथिलांचल के रीति–रिवाज,परंपरागत मान्यताएँ और विश्वास, संस्कार, अंधविश्वास और रूढ़ियां आदि आँचलिक संस्कृति के ही बाहरी रूप–पक्षों के साथ–साथ सामाजिक अंतर्विरोधों को स्पष्ट रूप से दिखलाना है। (2011) नागार्जुन का गद्य साहित्य में डॉ आशुतोष राय ने कहा है कि " नागार्जुन के भीतर ग्रामीण संस्कृति का संस्कार कूट–कूट कर भरा था तभी तो ग्रामीण संस्कृति की विशेषता उनके उपन्यासों में उभर कर दिखलायी पड़ती है।" वर्तमान सामाजिक तथा सांस्कृतिक स्तर पर मिथिला के नवीन ग्रामीण संस्कृति के बदलाव को इस शोध आलेख के माध्यम से रेखांकित करने का सार्थक प्रयास किया गया है । यथासंभव सम्बंधित साहित्य का गुणता से अध्ययन करने के पश्चात 2012 के बाद उपरोक्त विषय पर कोई शोध कार्य पुस्तक के रूप प्राप्त नहीं हुआ है ।

उद्देश्य

वर्तमान भूमंडलीकरण ने अपने प्रभाव से जिस रूप में हमें प्रभावित किया है उससे भारतीय गाँव अछूते नहीं हैं। बाजारी शहरी संस्कृति से पूरे गाँव पट चुके हैं कहें कि गाँव शहर बन चुके हैं। इस बदलाव में गाँव ने यदि कुछ खोया है तो वह है उसकी अपनी संस्कृति निसंस्देह गाँव को यदि बचाना है तो अपनी संस्कृति को बचाना होगा। संस्कृति से दूरी अपने आप से दूरी है अर्थात् इससे अपने आप का बोध गायब हो जाता है। नागार्जुन के उपन्यासों में ग्रामीण संस्कृति के विविध आयाम को समझने के क्रम में इसी उदेश्य को इस आलेख में रेखांकित किया गया है।

प्रकृति चित्रण

नागार्जुन के उपन्यासों में मिथिला का प्राकृतिक सौंदर्य पूर्ण समग्रता के साथ चित्रित हुआ है। मिथिलांचल का सौंदर्य नागार्जुन को इतना अधिक प्रिय है कि प्रवासी के रूप में भी वहाँ के ताल–तलैया, आम–लीचियों, बरगद–तालमखाना आदि के साथ चंद्रमा का शीतल भव्य प्रकाश तथा खेतों की हरियाली आदि का स्मरण कर कवि हृदय बेचैन हो उठता है और इसी बेचैनी के कारण नागार्जुन के उपन्यासों में प्राकृतिक सौंदर्य उभर कर सामने आया है। 'रतिनाथ की चाची' में बलुआह पोखर का विस्तृत वर्णन प्राकृतिक वातावरण को दृश्यमान कर देता है –''हेमंत की हल्की ठंड में सिल्लियों और वनमुर्गियों का झुंड,बलुआहा के निर्मल जल में घने सेवार पर इधर से उधर छप–छप करके दौड़ा करता शिशिर की नीरव निस्तब्धता निशा में रह–रहकर एक–आध बड़ी मछली पानी पर उतराकर अपने 'पर' फड़फड़ाती तो ठिठुरती प्रकृति के वे एकांत क्षण मुखरित हो उठते। वसंत में ग्रामीण बालक–बालिकाएँ लाख मना करने पर भी अपना जल–विहार आरंभ कर देते। वैशाख और जेठ के महीने में तो मानो वरुण देवता का खजाना धनी–गरीब, बूढ़े–बच्चे, औरत–मर्द सभी के लिए खुल जाता है .... भिंड पर चारों ओर बरगद, पीपल, पाकड़, मौलश्री, आम और जामुन के पेड़ थे। वे गर्मी, बरसात और जाड़े के दिन में चरवाहों और राहगीरों की माँ–बाप थे। अपनी शरण में आए हुए पशु–पक्षियों के लिए भी उनमें अपार ममता थी। कीड़े–मकोड़े तक उनकी स्नेह–सुधा से वंचित न थे।''1 नागार्जुन ने 'बलचनमा' में भी प्रकृति–चित्रण तथा

परिवेश को उभारने से सफल रहे हैं –''धान की पकी पीली फसलों में समूचा बाँध ऐसा बुझाता था, मानो सुनहली मिट्टी से पुता हुआ भरी मैदान हो। मेंड़ों की चौकोर लकीरें धान के शीशों से ढँकी पड़ी थीं। सारे खेतों

में अन्नपूर्णा भवानी के आशीर्वाद पकी फसलों की सकल में छाए हुए थे लोगों की खुशी का न ओर था न छोर। सभी के मुँह पर मुस्कान, सभी के आंखों में कामयाबी की झलक। जिनकी अपनी फसलें थीं, वे सभी खुश थें, जिनके नहीं थीं, वे भी खुश थे गिरहथ, बनिहार, कल्लरा, भिखमँगा सभी के चेहरों पर आशा की रौनक थी। फसल हुई है तो मजूरी भी मिलेगी ,बनिहारी भी।

इसी प्रकार 'वरुण के बेटे' और 'दुखमोचन' में भी प्रभावशाली चित्र प्रस्तुत हुए हैं, जो अपनी यथार्थता के साथ प्राकृतिक सौंदर्य के अच्छे उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। दुखमोचन' का आरंभ भी प्रकृति (वर्षा) के आरंभ के साथ होता है :–

''टिप–टिप–टिप....पिछले सत्तर घंटों से आसमान टपक रहा था। ऊदे–ऊदे, भारी–भारी बादल,विराट चँदोवा की तरह ऊपर तने हुए थे। नीचे भीगी धरती सिकुडवे सिमटकर मानो छोटी हो आयी थी। कीचड़ की घिचिर – पिचिर ने मन प्रफुल्लता हर ली थी।''

इसमें कोई संदेह नहीं कि नागार्जुन प्रकृति के कुशल चितेरे हैं। उन्होंने अपने प्राकृतिक वातावरण का अत्यंत सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है। प्रगतिशील लेखक होने के बावजूद नागार्जुन ने प्रकृति के नाना रूपों द्वारा मानवीय संवेदनाओं को बड़े आकर्षक ढंग से व्यक्त किया है।

लोकविश्वास और अंध परम्परा

नागार्जुन के उपन्यासों में मिथिला के ग्रामीण जनजीवन में प्रचलित लोक विश्वासों एवं अन्ध–परंपराओं का भी वर्णन हुआ है। इसके उपादान के रूप में भूत–प्रेत, जादू–टोना, ताबीज, शगुन, मृत्यु संबंधी अंधविश्वास जैसे आदि तत्व आते हैं। ग्रामीण समाज के लिए अंधविश्वासों का इतना महत्व है कि वह जन–जन में रच–बस गया है। 'बाबा बटेसरनाथ' में पानी न बरसने पर इंद्र को खुश करने के लिए तरह–तरह के उपक्रम किए गए हैं –''मेरी इस छाया में बैठकर तेरी इस बस्ती रूपउली के ब्राह्मणों ने मिट्टी के ग्यारह लाख शिवलिंग बनाए और उनकी सामूहिक पूजा की उन्होंने, फिर भी मेघ की कृपा नहीं हुई गवालों, अहिरों और धनुकों ने यहीं चार दिनों तक भुईयाँ महराज कापूजन किया, दस भेडों की बलि चढ़ाई और दो जवान भाब खेलते खेलते लहूलुहान होकर गिर पड़े थे, फिर भी राजा इन्द्र खुश नहीं हुआ.....एक रात मर्द जब सो गए तो गाँव भर की औरतें दस–पंद्रह गुटों में बट गई तालाब से मेंढक पकड़ लाए गए, उन्हें ओखलियों में मुसलों से कुचला गया गीतों में बादल को बुलाती रही वे, देर तक बुलाती रहीं ,लेकिन मेघ नहीं आया.....पंडितों ने महीनों तक चंडीपाठ किए, साधकों ने एक–एक मंत्र को लाखों जपा.......सब व्यर्थ वरुण को दया नहीं आई।''

मनौतिया

ग्रामीण लोग रोजाना जिंदगी से संबंधित कार्य की सफलता के लिए मनौतियां मानते हैं। जैसे की खेत, खलिहान तथा उत्पादन में वृद्धि, दैवी–आपदाओं से रक्षा, संकटों से मुक्ति, पारिवारिक–सुख, विवाह, संतान–प्राप्ति, परीक्षा में यश प्राप्ति आदि के लिए मनौतियां मानते हैं। इच्छित फल या यश मिलने पर मनौती के अनुसार ही देवी–देवताओं की पूजा–अर्चना, भागवत पुराण की कथा, सत्यनारायण की पूजा,

जागरण, बली आदि का आयोजन कर अपने इष्ट देव को प्रसन्न रखते हैं। नागार्जुन ने ग्रामीण लोगों की मानोतियों मानते तथा सफलता मिलने पर इष्ट देव को प्रसन्न रखने के लिए किए जाने वाले आयोजनों का अपने उपन्यासों में यथार्थ चित्रण किया है। अपने मनोरथ को पूर्ण हो जाने पर गाँव के लोग किस प्रकार अपने इष्ट की पूजा–प्रार्थना किया करते हैं, जिसका सुंदर वर्णन बाबा बटेसरनाथ उपन्यास में हुआ है –

''किसी के घर कोई शुभ–कार्य होता तो वहां आकर पाठक बाबा का पूजन अवश्य कर लेता मनोरथ पूरा होने पर लोग आकर धूमधाम से मनौतियाँ चढ़ाते रेशम की झूलें,कोढ़िला के बने सिरमौर और मंडप, जरी–गोटे की मालाएँ, पीतल–काँसे की घंड़ियाँ, लाल इकरंगे का टूकड़ा, धूप–दीप ,फूल–फल, अच्छत–दूध, दूब और गंगाजल, बेल और तुलसी के पत्ते.... फर–फरहारी, मिठाईयाँ, पकवान, पान–मखाना.. ....ढोल–ढाक–पिपहीबारह महीने में बीस पचीस बकरे भी बलि चढ़ते थे।''

अंधविश्वास

21वीं शदी में विज्ञान की प्रगति के कारण चिकित्सा के क्षेत्र में एक नई क्रांति का संचार हुआ। तमाम असाध्य रोगों का निवारण आज चिकित्सा के द्वारा संभव हो पाया है। बावजूद इसके भूत,टोना,बरम आदि गाँव में आज भी प्रचलित हैं ग्रामीणों का ऐसा मानना है कि ''भूत, टोना, बरम आदि का उपचार किसी वैध या डॉक्टर द्वारा नहीं बल्कि किसी सिद्ध पुरुष के द्वारा ही इनका उपचार किया जाता है। इसी अज्ञानता और अशिक्षा के कारण आज भी इन रोगों के उपचार के लिए गावों में झाड़–फूँक करनेवाले औघड बाबा आस–पास के इलाकों में मशहूर हो गए है। जहाँ कहीं भूत–प्रेत का उपद्रव उठ खड़ा होता, जहाँ कहीं देवी–देवता उत्पात मचाते, जहाँ कहीं ब्रह्म–कर्णपिशाची–चुड़ैल आदि की खुराफातें उभरती, वहाँ औघड़ बाबा की गुहार होती है। उस सिद्ध डोम के पहुंचते ही आधी गड़बड़ी ठीक हो जाती, जटाधारी औघड़ जोरों से चिमटा पकड़कर जब 'ओउअलख निरंजन भग् सा....ले......को ऊंची आवाजमारता तो बाकी खुराफात भी खतम हो जाती।

इसी प्रकार कामना–पूर्ति हेतु ''देवी–देवता का फूल अंदर डालकर लोग बड़े जतन से जंतर मढ़वाते ताँबे का,चाँदी का, सोने का, अष्टधातु का, वे उसे बाँह में ,गले में, कमर में बाँधते ताकि हमेशा शरीर से लगा रहे।''

रीति–रिवाज और प्रथाए

नागार्जुन ने अपने उपन्यासों में ग्रामीण रीति– रिवाजों एवं प्रभावों का भी ईमानदारी से चित्रण किया है, जिसके द्वारा समय का यथार्थ परत–दर–परत पाठकों के सम्मुख खुलकर सामने आता है। नागार्जुन ने मिथिला के ग्रामीण जनजीवन में फले–फूले रीति–रिवाज और प्रथाओं के सारे उपादान को उसी के अंदाज चित्रित किया है। जैसे –''विवाह, अनुष्ठान, व्रत–त्यौहार, आखेट ,मत्स्य व्यवसाय, पशुपालन आदि का वर्णन बखूबी से किया है। मिथिलांचन में विवाह की जो प्रथा प्रचलित है, वह भारत के अन्य अँचलों से दुलर्भ है। पशुओं की तरह मिथिला में वरों का मेला सौराठ लगता है। सौराठ में क्रय–विक्रय होने वाले दूल्हों के संबंध में अपना विचार प्रकट करते हुए नागार्जुन लिखते हैं – सौराठ में यही तो होता है। हजारों विवाहथीं इकट्ठे होते हैं। सभा में यदि कन्याएँ भी शामिल होतीं तो स्वयंवर का यह विराट–पर्व न केवल भारत–भर में परंतु संपूर्ण विश्व में अद्वितीय कहलाता। तब सोनपुर के प्लेटफार्म और हरिहर क्षेत्र के मेले

की तरह सौराठ की यह विवाह सभा भी मशहूर हो गई रहती। यद्यपि अपनी मौजूदा स्थिति में भी ब्राह्मणों का यह वैवाहिक मेला अनुपम है।

विवाह संबंधी और कई विशेषताएँ हैं,मिथिला की जो अन्यत्र प्राप्त नहीं होती जैसे मिथिला में विवाहोपरांत जमाई को कुछ दिन ससुराल में ही रखना पड़ता है और लौटते समय घर–गृहस्थी के सामान के साथ 'बयने' के तौर पर काफी सामान दिया जाता है। 'रतिनाथ की चाची' में इस परंपरा की चर्चा हुई –''ससुराल में सत्रह रोज रहकर उमानाथ पर घर आया। रामपुर वाली ने अपने जमाई को जिस प्रकार धूम–धाम से विदाई की थी, उमानाथ के सास–ससुर ने उस प्रकार अपने दामाद की विदाई नहीं की। काँसे की मामूली थाली,एक बड़ा और छः छोटे कटोरे। लोटा–गिलास, रसोई के साधारण बर्तन। कंबल–दरी और चादर–तकिया। जूता–छाता। दो जोड़ा धोती। एक चादर और पाग दुपट्टा.......केला, दही, चूड़ा, मिठाइयाँ, पकवान। गरी–छुहारे, मेवा–मखाना चाची ने कुछ भी नहीं रखा, सारा बँटवा दिया।''

ग्रामीण जीवन में प्रचलित तीज–त्यौहारों के महत्व का रेखांकन भी नागार्जुन के उपन्यासों में हुआ है। इन त्यौहारों में खेल–कूद, नाच–गाने आदि का समावेश रहता है जैसे –''दिगो के दलान पर उस रात 'पचीसी' खूब जमी थी। पचीसी चौपड़ की तरह का एक खेल है, जो आठ कौड़ियों के सहारे खेला जाता है।'' ''चउड़– चन (भाद्र शुक्ल की चौथ, नै वैद्ध निवेदनपूर्वक भादों की चौथ के उगते चांद को देखने का (त्यौहार) भी त्यौहार के रुप में मनाया जाता है।''

आखेट के रूप में 'वरुण के बेटे' में मछलियों का सुन्दर वर्णन हुआ है मछलियों के पकड़ने और फँसाने के औजारों से ज्ञात होता है कि मछलियों के शिकार की ग्रामीण संस्कृति भी मिथिलांचल में विद्यमान है–

''मछलियाँ पकड़ने और फँसाने के औजार भीत की खुटियों से टँगे थे–गाँज, टापी, सहत, सरैल, किस्म– किस्म के डंडे जालों की कढ़ाई–बिनाई में काम आने वाले छोटे–बड़े सूए, शलाखें जालों के अधूरे टुकड़े।''

लोकगीत

भारतीय गाँवो की गँवई संस्कृति में लोकगीतों का अपना एक अलग ही महत्व है। ग्रामीण लोग अपने हर्ष, उल्लास, उत्साह, मनोरंजन, थकान के साथ–साथ, दु:ख–दर्द, मिलन–विरह, व्यथा, पीड़ा, अभावों को तुओ और प्रकृति के साथ जोड़कर गीतों के माध्यम से प्रकट करते हैं। नागार्जुन मूलतः जन–समस्याओं को उभारनेवाले रचनाकार के रूप में जाने जाते हैं तथापि उनका ध्यान लोक गीतों के विविध पक्षों की ओर भी गया है। उनके उपन्यासों में लोक गीतों का प्रयोग यत्र–तत्र हुआ है। नागार्जुन ने बलचनमा उपन्यास में एक विरहणी की व्यथा को लोकगीतों की इन पंक्ति में बड़े ही सुन्दर ढ़ंग से उकेरा है। जो इस प्रकार है :–

''सखि हे मजरल आमक बाग !
कुहू कुहू चिकरए कोइलिया झींगुर गाबएफाग !
कंत हमर परदेस बसइ छथि बिसरि राग–अनुराग !
विधि भेल बाम , सीेल भेल बैरी फूटि गेला ई भाग !
सखि हे मजरल आमक बाग !''

मिथलांचल में कमला नदी का बहुत महत्व है। मिथला के लोग कमला नदी को देवी की तरह पूजते है। अपने इस गीत के माध्यम से नागार्जुन ने कमला नदी के महता को दरसाया है :–

''कमला–नदी के बीचोबीच
तैयार हो गया है बाँध !
तुमने उस बाँध पर फुलवाड़ी लगा दी है !
अजी, किस फुल की ओढ़ती है ओढ़नी
ग ग ग ग ग
बहाएगी किस तरह अपनी धारा ?
हंस पर चढ़कर आएगी कमला मैया ?
होकर मगर सब सवार सब चली जाएगी
तिरहत (मिथला) की तरफ बहाएगी धारा !''

नागार्जुन मूलतः प्रगतिवादी कथाकार हैं। इसीलिए लोक गीतों के चित्रण में भी उनका प्रगतिवादी रूप उभर सामने आया है। लोक गीतों के चित्रण में जहाँ एक ओर वे मिथलांचल की नदी के महत्व को रेखांकित करते है, साथ ही विरहणी की व्यथा की ओर हमारा ध्यान केन्द्रित करते है। वहीं दूसरी ओर इन गीतों में जमींदारो के गुल्मो का यथार्थवादी चित्रण भी प्रस्तुत करते हैं। 'बलचनमा' में प्रयुक्त एक गीत से प्रगति का संकेत मिलता है। गरीब किसानों की सभा चल रही है। सभा समाप्त होने से पूर्व एक नौजवान आक्रोश के साथ गा उठता है –

''दुर्दिनमा केलक हरान
रे,फिकिरिमा मारलक जान !
करजा करके खेती केलूँ ,
मरि गेलइ सब धान – रे फिकि .
बैल बेचि रजवा के देलू , छोड़ए नहिं बइमान
जमींदार के जुलुम रोकेउ,
चेतउ भाइ किसान – रे फिकि।

इस प्रकार नागार्जुन के लोकगीतों के माध्यम से मिथिला की आस्था एवं रागात्मकता को व्यक्त करने के साथ–साथ जमींदारों के जुल्म से आहत किसानों के आक्रोश को भी व्यक्त किया गया है।

निष्कर्ष

नागार्जुन के उपन्यासों में ग्रामीण संस्कृतिका विविध आयामों के विवेचन के उपरांत निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि नागार्जुन के भीतर ग्रामीण संस्कृति का संस्कार कूट–कूट कर भरा है,तभी तो ग्रामीण संस्कृति की विशेषता उनके उपन्यासों में उभरकर दिखलायी पड़ती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. नागार्जुन – रतिनाथ की चाची, पृष्ठ– 39 ,वाणी प्रकाशन ,नई दिल्ली , द्वितीय संस्करण – 1986
2. नागार्जुन – बलचनमा, पृष्ठ– 102 , किताब महल , इलाहाबाद ,नवाँ संस्करण ,1987
3. नागार्जुन – दुःखमोचन,पृष्ठ–7 , राजकमल प्रकाशन , नई दिल्ली ,1986
4. राय डॉ विवेकी, स्वातंत्र्योतर हिन्दी कथा–साहित्य और ग्रामीण जीवन, पृष्ट सं– 27

5. नागार्जुन– बाबा बटेसरनाथ, पृष्ठ–68–69, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 1995
6. नागार्जुन– बाबा बटेसरनाथ –75 राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 1995
7. नई पौध – पृष्ट सं– 39 , राजकमल पपेर बक्स , नई दिल्ली , द्वितीय संस्करण –1999
8. नागार्जुन –रतिनाथ की चाची ,पृष्ठ– 117–118, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 1986
9. नागार्जुन– रतिनाथकी चाची, पृष्ठ– 35, वाणी प्रकाशन , द्वितीय संस्करण,1986
10. नई पौध – पृष्ट सं– 98 , राजकमल पपेर बक्स, नई दिल्ली , द्वितीय संस्करण –1999
11. नागार्जुन – नई पौध, पृष्ठ–102, राजकमल पपेर बक्स , नई दिल्ली ,द्वितीय संस्करण –1999
12. नागार्जुन – वरुण के बेटे, पृष्ठ– 11, राजकमल पपेर बक्स , नई दिल्ली , द्वितीय संस्करण –2020
13. बलचनमा – पृष्ट सं–216 , नागार्जुन रचनावली भाग 4 में संकलित पृष्ट सं– 216
14. वरुण के बेटे – नागार्जुन रचनावली भाग 4 में संकलित पृष्ट सं – 482
15. बलचनमा – पृष्ट सं–135 , नागार्जुन किताब महल ,इलाहाबाद .नवा संस्करण ,1987
16. यादव डॉ. सुरेंद्र कुमार, नागार्जुन का उपन्यास साहित्य समसामयिक संदर्भ,वाणी प्रकाशन,नई दिल्ली, 2021 पृष्ठ– 152
17. राय डॉ आशुतोष , नागार्जुन का गद्य साहित्य , लोकभारती प्रकाशन,इलाहाबाद, 2019 ,पृष्ट सं – 124